[Social Issues and Environmental Problems,Vol.3 (Iss.9:SE): Sep, 2015] 2394-3629(P) ISSN- 2350-0530(O) ISSN-
Impact Factor: 2.035 (I2OR)
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v3.i9SE.2015.3253

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

धरती के ताप की दवा

सीमा कदम
माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय, कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खंडवा (म.प्र.)

इबादत के लिए
उठे हुए हाथ हैं पेड़ और
आचमन के लिए तैयार हैं कुएँ
आसमान को तो
जंगल ही उठाये हैं
चमगादड़ को तो भ्रम है
जिस दिन नहीं होंगे पेड़
सचमुच आसमान ही टूट पड़ेगा ।

भूमिका

आज धरती मॉ का दुःख सर्वविदित है। उसे संभाले रखने वाले तत्व–जल, वनस्पति, आकाश और वायु, विकास की चिमनियों से निकलने वाले धुएं के कारण हांप रहे हैं ।

भू–मण्डलीकरण की लालची जीभ ने इन सभी तत्वों को बाजार में सुन्दर पैकिंग में भर व्यापार की वस्तु के रूप में पेश कर दिया है । इन चारों के कम होने से पॉचवे अंग यानी अग्नि ने आज पूरी धरती को भीतर–बाहर से घेर लिया है । जिसके कारण धरती का भीतर–बाहर सब तपने लगा है । इसीलिए 'पृथ्वी दिवसों' की आड़ में संयुक्त राष्ट्र टाइप धरती के दूर के रिश्तेदार आईसीयू में डॉयलिसिस पर लेटी धरती को शीशों के कमरों से झांकते रहते हैं । धरती के बुखार से दूर के रिश्तेदारों की तरह चिंता में दुबले हो रहे थर्मामीटर लेकर बैठे संयुक्त राष्ट्र ने हाल ही में 'सहस्त्राब्दि का पर्यावरण आकलन' छापा है ।

शोध प्रविधि

धरती के ताप की दवा शोधपत्र के निर्माण मे प्राथमिक स्त्रोत, द्वितीयक स्त्रोत जैसे पुस्तकों सन्दर्भ ग्रंथों व इन्टरनेट व उपलब्ध साधनों से लिये गये । संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट के अनुसार विश्व की प्रमुख नदियों में पानी की मात्रा निरन्तर घट रही है । अफ्रीका की नील, चीन की यलो, उत्तरी अमेरिका की कोलराडो नदियों से लेकर भारत की प्रमुख नदियॉ भी हमारी आस्थाओं की तरह निरन्तर सूखती जा रहीं है ।

इस भयावह रिपोर्ट के अनुसार धरती की शक्ति बढ़ाने वाले समस्त प्राकृतिक तत्व भी अस्त–व्यस्त हो चले हैं। धरती के गर्भ का निरन्तर गिरता जल स्तर लगातार जीवन मूल्यों की तरह रसातल में उतरता जा रहा है । संसार के 15 प्रतिशत पक्षी, 30 प्रति स्तनधारी जीव लगभग विलुप्त हो गये हैं । पृथ्वी का हरियाला तंत्र बिगड़ने के कारण बीमारियों के प्रकोप भी लगातार बढ़ रहे हैं। इसलिये विश्व के कुछ अमीरजादे देश पूरे संसार की वनस्पतियों पर नजर गड़ाये हैं । कुछ ऐसे ही बिगड़ैल अमीरजादे देश हमारे जैसे विकासशील राष्ट्रों की बेबस सरकारों तथा उनके पात्रों यानी राज्य सरकारों को मामूली लालच देकर स्थानीय संसाधनों की छीना–झपटी में लगे हैं ।

ऐसी छीना–झपटी करने वालों को देशों की सरकारें तथा राज्य सरकारें खूब उनकी सेवा में मस्त रहती है। । ऐसी ही सरकारों के कंधों पर चढ़कर बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्राकृतिक संसाधनों को लूटने का खेल जारी रहता है जिसके कारण पूरी धरती के जैविक तत्व अस्त–व्यस्त हो चले हैं ।

आज धरती की प्रत्येक परत में यानी परत–दर–परत विकार बढ़ते जा रहे हैं । अजीबो–गरीब कीटनाशक, तरह–तरह की रासायनिक खादें धरती मॉ की रगों तथा जोड़ों में जहर बन घुल चुकी हैं । आज हममें से ज्यादातर लोगों के शरीर में खून के साथ–साथ पेस्टीसाइज की मात्रा लगातार बढ़ रही है । विकास की इसी होड़ में बड़ी कंपनियों के उच्चाधिकारी तथा नेतागण ही मस्त दिखते हैं, शेष पूरी जनता त्रस्त है ।

पश्चिमी विकास की शैली को अपनाने की रेस में विश्व के समस्त प्राकृतिक संसाधनों को हड़पने की लूट मची है । पश्चिमी दृष्टि प्रकृति सौन्दर्य को मात्र उपभोग की वस्तु मानती है । उनके लिये वन, नदियॉ, समुद्र, उपवन, जीव, वनस्पतियॉ सब 'खाओ–पीओ मौज मनाओं' की वस्तुयें हैं । इसी को प्रगतिशीलता माना जाता है । मात्र भारतीय जीवन दृष्टि में ही प्रकृति का प्रत्येक तत्व देवतुल्य, मातातुल्य तथा पितातुल्य माना गया है। लेकिन अफसोस हमने यहॉ भी पश्चिमी नकल के कारण माता–पिताओं को भी वृध्दा आश्रमों में बिठा दिया है ।

भारतीय जीवन दर्शन अनादिकाल से ही कण–कण में भगवान देखने का आदी रहा है । गीता में भगवान कृष्ण ने तो प्रकृति से लेकर उतना ही वापस न देने वाले को 'प्रकृति चोर' तक कहा है ।

'पर्यावरण आकलन' की आड़ में संयुक्त राष्ट्र ने तो 'दि डे आफ्टर' फिल्म दिखा दी लेकिन इसका इलाज क्या है, कैसे उतरेगा धरती का बुखार, किन–किन उपायों से धरती पुनः स्वास्थ्य को उपलब्ध हो सकती है, इसके बारे में कोई ठोस दलील नहीं सुझायी गयी है ।

पृथ्वी की चिंता करने वालों को 'भारतीय पर्यावरण दृष्टि' को ठीक से समझने की आवश्यकता है। हालांकि आज स्वयं भारत की ऑख में ही विकास का मोतियाबिन्द उतर आया है, लेकिन इसके बावजूद धरती का बुखार हरने के लिये 'भारतीय पर्यावरण पध्दति' ही एक मात्र उपाय है । यह वाक्य कोई 'कठमुल्लई फतवा' नहीं, बल्कि सत्य है, क्योंकि विश्व की किसी भी जीवन दृष्टि के पास पॉचो तत्वों को संतुलित करने के लिये ऋगवेद तथा भारतीय संत दर्शन के अलावा ज्ञान का दूसरा कोई स्रोत उपलब्ध नहीं । लेकिन हाय! आज भारत स्वयं पश्चिम के जेहादी तथ जहालत विकास की कपकपाती छाया बनने को आतुर है । आज हमने स्वयं हमारी सांस्कृतिक ओजोन परत में छेद कर दिये हॅ जो पंचतत्व दर्शन हमारी दिनचर्या का हिस्सा था उसे ही हमने दूर–दर्शन बना दिया है । पेड़ पशु–पक्षियों व मनुष्यों के लिये भोजन, ईधन, रेशा आदि भी देते हैं । एक वृक्ष की औसत आयु पचास वर्ष मानते हुए एक अनुमान से वृक्ष का कुल योगदान यह माना गया है।

1. ऑक्सीजन का निर्माण 2,50,000 रूपये
2. वायु प्रदुषण पर नियंत्रण 5,00,000 रूपये
3. भूक्षरण रोकने और मिट्टी में उर्वरा शक्ति का निर्माण 2,50,000 रूपये
4. जल का पुनर्चक्रीकरण व आर्द्रता पर नियंत्रण 3,00,000 रूपये
5. पशु–पक्षियों को बसेरा 2,50,000 रूपये
6. प्रोटीन व वसा का निर्माण 20,000 रूपये

इस प्रकार एक वृक्ष अपने जीवन काल में 15,70,000रूपये मूल्य का योगदान प्रदान करता है । लेकिन यह तो एक व्यावसायिक आकलन है । इस आकलन को सही आकलन नहीं कहा जा सकता, क्योंकि पेड़–पौधें, वन आदि संपूर्ण पर्यावरण और परिवेशिकी के आधार हैं और जो कुछ प्रकृति में विद्यमान है वह सब एक–दूसरे पर जिस प्रकार से अवलंबित है उसके आधार पर इसका मूल्य और परिमाण अपरिमित है ।

सुझाव

भारत के सभी लोगो में प्रकृति की सभी चीजो के प्रति यही भाव रहा है । हमने वायु, जल, अग्नि, पृथ्वी और आकाश सभी पंचभूतों के पीछे छिपी हुई दिव्य सत्ता को पहचाना है । हमने पेड़ों में, औषधियों में, नदियों में, सरोवरों में, पर्वतों में और प्राणियों में देवसत्ता के ही दर्शन किये हैं । अपने इस ज्ञान के लिये भारत दुनिया में सबसे आगे होने का दावा कर सकता है । हमने सृष्टि की हर वस्तु में दिव्य सत्ता के ही दर्शन किये है।

इसलिये हम इस सृष्टि की सभी चीजों से अपने इस संबंध के कारण ही अपना सामंजस्य बैठाने की कोशिश करते हैं । इसीलिये हम हमेशा ऐसी ही सभ्यता बनाते रहे है जो सबके लिये कल्याणकारी हो ।

हमारी प्राकृतिक संपदाओं में मिट्टी और जल अत्यधिक मूल्यवान संसाधन है । जल और मिट्टी के सह–चरण से जीवन का संचरण होता है । मिट्टी और जल में अनगिनत सजीव तत्व होते हैं । ऐसा माना जाता है कि एक घन सेंटीमीटर उपजाऊ मिट्टी में अरबों जीवित प्राणी हैं । आज इस जीवंत मिट्टी को रासायनिक उर्वरकों से विनष्ट किया जा रहा है । दरअसल, प्रकृति की इस सम्पदा के साथ हमारा जीवंत और सच्चा रिश्ता पूरी तरह से जैसे टूट–सा गया है । हमारी परिवेशिकी के साथ हिंसा और विलगाव की इन परिस्थितियों में प्रकृति प्रदत्त स्वास्थ्य, सौंदर्य और स्थायित्व दीर्घकाल तक प्रस्थापित नहीं रह सकते । इनके पुनर्स्थापन के लिये हमें लालच और स्वार्थ की वृत्ति का त्याग करना होगा और मानव मूल्यों का सम्मान कर उन्हें दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ अंगीकार भी करना होगा ।

'ओरण' शब्द का अर्थ नितांत सरल है, लेकिन विराट भी । सरल ही विराट होता है । ओ–ऋण अर्थात् उऋण । ओरण ऐसे वनों का नाम है जो अपने इष्ट देवताओं तथा अपने पूर्वजों को समर्पित होते हैं । इन वनों के भीतर और बाहर श्रध्दा का संविधान सदैव रहता है । जिसमें कोई भी इन वनों से लकड़ी नहीं काटेगा, न ही किसी प्रकार का आर्थिक लाभ लेगा । वन में विचरने वाले प्रत्येक जीव को संरक्षण मिलेगा यानी कोई इनकी हत्या नहीं करेगा । इनमें पूरी श्रृध्दा के साथ वन संरक्षण किया जा सकता था, फिर साथ ही आज जिसे अंग्रेजी में बायोडायवर्सिटी कहा जाता है, उसका भी पूरा विस्तार सुरक्षित रखा जाता था । इनमें सर्वोत्तम प्रजाति के पेड़ रोपे जाते है । इसलिये आज भी 'ओरण' में जो प्रजातियां सुरक्षित है वे देशभर के वन विभागों में नही मिलेगी ।

निःसंदेह यह प्रारंभ ही है, लेकिन शुभ लक्षण भी है। अभी हम सबको इसे समझने की दिशा में एक लंबा रास्ता करना है। हमने बहुत–सी आधुनिक मानी गई नई पध्दतियों को अपनाकर देख लिया है, दुर्भाग्य से वह हमारा माथा और कंधे दोनों झुका रही है । इसलिये आज फिर से अपनी सनातन परंपराओं की ओर देखने का अवसर आ गया है । 'ओरण' पर फिर से लौटने का समय आ गया है, सूखे अकाल और बयाबान की तरफ बढ़ते देश को फिर से हरियाली की चादर ओढ़ाने का अवसर आ गया है ।

संदर्भ

1. अग्रवाल अनिल – बूंदों की संस्कृति देश का पर्यावरण एक नागरिक रपट
2. हुसेन जाबिर – धरती का ताप – परिषद साक्ष्य
3. हुसेन जाबिर – घाम मे कोंपले – साक्ष्य
4. नारायण सुनील – वन सुरक्षा हो साथ तो बने विकास की बात
5. हमारा पर्यावरण – पर्यावरण कक्ष गांधी शांति प्रतिष्ठान विज्ञान और पर्यावरण केन्द्र, नई दिल्ली